Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 4 | ISSN : 2581- 6306

आधुनिक संस्कृतसाहित्य में गलज्जलिका ; काव्यशास्त्रीय दृष्टि

डॉ. सन्दीप कुमार द्विवेदी
सहायक प्राध्यापक संस्कृत
भारतीय महाविद्यालय फर्रुखाबाद

Article Info
Volume 4, Issue 4
Page Number : 42-47

Publication Issue :
July-August-2021

Article History
Accepted : 03 July 2021
Published : 10 July 2021

सारांश – गीतिकाव्य या गेयकाव्य का माधुर्य काव्यरसिकों को स्वतः ही आकृष्ट कर लेता है। कवि गण गीतियों के माध्यम से काव्य की सरस अभिव्यक्ति को पुष्ट करते रहे हैं। समानान्तर प्रवर्तमान काव्यशास्त्रीय परम्परा में आचार्यों ने काव्य के तत्त्वों पर गम्भीर चिन्तन कर तथा काव्य रचना की प्रकृति के आधार पर उसे लक्षणबद्ध कर मूल स्वरूप को उद्घाटित किया है तथा आज भी कर रहे हैं। भाषान्तर काव्यविधा गजल के माध्यम से भी संस्कृत भाषा के कवियों ने अपने कौशल एवं कल्पनावैशिष्ट्य को काव्य रसिकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है अत एव साम्प्रतिक काव्यशास्त्री आचार्यों ने संस्कृत गजल गीति के स्वरूप, अवयव, तथा प्रतिपाद्य के आधार पर लक्षणबद्ध कर संस्कृत काव्यशास्त्र में स्थान दिया है।

संकेत शब्द – गेयकाव्य, रागकाव्य, गलज्जलिका, गजलगीति, मतला, शेर, मकता, आरम्भिका, मध्यिका, अन्त्यिका, काव्यशास्त्र, लक्षण, अन्त्यश्रुति, रदीफ़, उपान्त्यश्रुति, काफ़िया आदि।

आदिकाल से ही संस्कृत काव्य निर्मिति सहृदयों के हृदय को रससिक्त करती रही है। कविगण भी नितनूतन कल्पनाओं के साथ विभिन्न विधाओं के माध्यम से अपने भावों को अभिव्यक्त करते रहे हैं। काव्य छन्द के सद्भावाभाव की दृष्टि से गद्य, पद्य, चम्पू के रूपमें त्रिधा विभक्त है जिसमें छन्दोयुक्त पद्यरचना[1] अपनी लयवाहिता, श्रुतिमाधुर्य, स्मरणशीलता एवं सरस शब्दार्थ–विन्यास के कारण सहृदयों के द्वारा समादृत है। पद्य में गीततत्त्व से समन्वित गेयकाव्य एवं रागकाव्य मानवमात्र की लोकप्रिय विधा है। कालिदास विरचित अभिज्ञान शाकुन्तल में हंसपदिका की गीति को सुनकर दुष्यन्त कहते हैं –

[1] साहित्यदर्पण 6/314

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

अहो रागपरिवाहिणी गीतिरिति।[2]

अर्थात् निरन्तर राग का प्रवाह धारण करने वाली गीति कहलाती है। राग काव्य की परम्परा में जयदेव के गीतगोविन्द को युगप्रर्वतक काव्य मानना असंगत न होगा। गीतगोविन्द के परवर्ती काव्यों में भाषा, भाव, छन्दोविधान, शैली एवं वस्तु योजना पर जयदेव का प्रभाव स्पष्टतया परिलक्षित होता है। गीतिकाव्य या रागकाव्य के माध्यम से कवि विभिन्न लयों, रागों एवं रसों के माध्यम से काव्य की प्रस्तुति करता है। आचार्य अभिनव गुप्त रागकाव्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है –

लयान्तरप्रयोगेण रागैश्चापि विवेचितम्।

नानारसं सुनिर्वाह्यकथं काव्यमिति स्मृतम्।।[3]

इस प्रकार संस्कृत काव्य जगत् में अनेक गेय काव्यविधाएं प्रचलित थीं। कालान्त में मुगल साम्राज्य में फ़ारसी एवं अरबी ने राजभाषा के गौरव को प्राप्त किया ; जिससे फारसी एवं अरबी भाषा–साहित्य की काव्य विधाओं को भारतीय भाषाओं के कवियों ने भी अपनी लेखनी से उपकृत किया। इसमें संस्कृत गेयकाव्य एवं रागकाव्य की समानधर्मिणी गज़ल उर्दू एवं फ़ारसी की विशिष्ट काव्य विधा है। गज़ल की लोकप्रियता का एक कारण संगीततत्त्व से इसकी निकटता भी है। गज़ल अरबी भाषा का शब्द है; जिसका अर्थ है श्रृंगारपरक कविता। शुरुआती फ़ारसी गज़ल की परिभाषा थी **प्रेम प्रदर्शित करते हुए प्रिया के कानों में फुसफुसाना (बाज़नान गुफ़्तगू कर्दन)** अर्थात् प्रेमभावनाओं की अभिव्यक्ति गज़ल का मुख्य प्रतिपाद्य थी। इसकी लोकप्रियता के कारण विभिन्न विषयों यथा–भक्ति, देशप्रेम, सामाजिक यथार्थ आदि भी गज़ल के प्रतिपाद्य हो गए। संस्कृत में सर्वप्रथम गज़ल लिखने का श्रेय जयपुर के महनीय कवि भट्ट मथुरानाथ शास्त्री को प्राप्त है।

भट्टोऽसौमथुरानाथशास्त्रीगजलपारगः।।

संस्कृतगजलोद्गाताप्रथमोहिमयामतः।।[4]

इनके अनन्तर बच्चूलाल अवस्थी, राधावल्लभ त्रिपाठी, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, इच्छाराम द्विवेदी, हरिदत्त शर्मा, विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र, रहसबिहारी द्विवेदी, रमाकान्त शुक्ल, पुष्पादीक्षित, जनार्दनप्रसादपाण्डेय आदि कवियों एवं कवयित्रियों ने संस्कृतगज़ल के व्यापक साहित्य की सर्जना एवं गलज्जलिका तथा गज़लगीति नामक अभिनव अभिधान प्रदान कर संस्कृतसाहित्य में प्रतिष्ठित किया है। लक्ष्य के रूप में विपुल साहित्य सर्जना को संज्ञान में रखकर स्वातन्त्र्योत्तर काव्यशास्त्रियों ने संस्कृत गलज्जलिका के लक्षण को व्यवस्थापित करने का प्रयास किया है; जिनमें आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी, आचार्य अभिराज राजेन्द्रमिश्र आदि प्रमुख हैं।

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी ने गजलगीति का लक्षण प्रस्तुत करते हुए लिखा है–

---

[2] अभिज्ञानशाकुन्तलम् पृ. 322

[3] अभिनवभारती पृ. 188

[4] अभिराजयशोभूषण / प्रकीर्ण0 / 56–57

द्विपादिकाभिर्निबद्धा गीतिर्गजलमुच्यते।[5]

आचार्य त्रिपाठी के अनुसार गज़ल का प्रत्येक पादयुग्म द्विपदिका **शेर** कहलाता है। पहली द्विपदी **मतला** कहलाती है। प्रत्येक द्विपदी का एक चरण **मिसरा** कहलाता है। प्रत्येक गज़ल में पाँच या उससे अधिक शेर होने चाहिए। प्रत्येक शेर के अन्तिम चरण में एक, दो या तीन शब्द आवृत्त होते हैं, इन्हें **अन्त्यश्रुति** या **रदीफ़** कहा जाता है। रदीफ से पहले उपान्त्यश्रुति **काफिया** कही जाती है। प्रथम पाद्युग्म में रदीफ एवं काफिया दोनों का निर्वाह होता है। शेष में मात्र उत्तरचरण में होता है।

आचार्य अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने गजल को अभिनव अभिधान प्रदान कर व्युत्पत्ति की है–

तत एव मया गीतिराख्यातेयं गलज्जला।

गलन्नेत्रजलत्वाद्वा सा गजज्जलिका पुनः।।[6]

नेत्रजल की वृष्टि कराने के कारण गज़ल को गलज्जलिका भी कहा जाता है। पारसीक छन्दविधान में इसके बन्ध की दीर्घता को **'बहर'** कहा जाता है। संस्कृत काव्य में गणों की व्यवस्था के समान फारसी गजल की एक निश्चित गण व्यवस्था होती है। जिसे **'मुतकारबे मुसम्मन सालिम'** तथा **'बहरे कामिल मुसम्मन'** कहा जाता है। इनमें मफऊल–फऊलून– फाइलुन संज्ञक गण होते हैं। जिससे इनके बन्ध की दीर्घता एवं लघुता स्पष्ट होती है। आचार्य अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने गज़ल के तीन भाग बतलाए हैं– मतला, शेर एवं मक्ता।

गजलस्य त्रयो भागास्तद्विद्भिः परिभाषिताः।

मतला–शेर–मक्तख्यास्तदिदानीं प्रतन्यते।।[7]

मूलभाव (Central theme) को स्पष्ट करने वाला, गज़ल का जो प्रारम्भिक वाक्य युगल होता है, उसे फारसी भाषा में मतला कहा जाता है। तथा अन्तिम वाक्य युग्म जो कवि के उपनाम से युक्त हो, वह मक्ता कहा गया है। मतला एवं मक्ता के मध्य जो प्रयुक्त हो उसे शेर कहा जाता है। स्पष्ट करते हुए आचार्य मिश्र कहते हैं–

गजलारम्भि यद्वाक्यं मूलभावप्रकाशकम्।

तदेव फारसीवाचि मतलेति समुच्यते।।

अन्तिमश्चापि यो बन्धः कविनामाङ्कितः खलु।

सोऽपि गजलतत्त्वज्ञैर्मकतेति निगद्यते।।

मतलामक्तयोर्मध्ये मूलभावैकपोषिणः।

---

[5] अभिनवकाव्यालंकारसूत्र 3/1/9

[6] अभिराजयशोभूषणम् पृ0 283

[7] अभिराजयशोभूषणम् पृ0 286

बन्धा भिन्नाशया वापि कथिताः शेरसंज्ञकाः।।[8]

आचार्य मिश्र ने मतला, शेर तथा मकता को संस्कृत काव्यशास्त्र में नवीन अभिधान क्रमशः आरम्भिका, मध्यिका एवं अन्त्यिका प्रदान किए हैं।

मतलाऽऽरम्भिका वाच्या शेर उच्येत मध्यिका।

अन्त्यिका च तथैवास्तु मकतेति मतम्मम।।[9]

आरम्भिका अथवा मतला का अन्तिम पद जो बार–बार दोहराया जाता है उसे 'काफिया' कहते हैं।

शब्द आरम्भिकाबन्ध वाक्ययोरन्तिमोऽथ सः।

एक एव भवेद्गीते काफियाख्योऽनुवर्तितः।।[10]

आचार्य मिश्र ने बच्चूलाल अवस्थी द्वारा रचित गज़ल में तीनों के उदाहरण स्पष्ट किए हैं–

आरम्भिका का उदाहरण –

पिकाः कूजन्ति माकन्देषु कूजेयुः किमायातम् ?

समीरा दाक्षिणात्या मन्दमञ्चेयुः किमायातम् ?[11]

मध्यिका यथा –

इदं पाणौ सुरापात्रं सुरा कुम्भेऽन्तिके रामा

उदन्वन्तः समे सर्वत्र शुष्येयुः किमायातम्?

अतन्त्र लोकतन्त्रं वा विवादो नामनि व्यर्थः

सुमन्त्रा यान्त्रिके तन्त्रे न सिध्येयुः किमायातम् ?

स्वतन्त्रत्वं भजेल्लोकः स्वतन्त्रत्वं परो धर्मः

युवानो यौवतं सम्भूय दीव्येयुः किमायातम् ?[12]

अन्त्यिका का उदाहरण –

न हि ज्ञानेन सिध्यत्यर्थ इत्याश्रित्य विज्ञानम्

कदर्या आर्यमर्यादां विलुम्पेयुः किमायातम्?[13]

---

8 अभिराजयशोभूषणम् / प्रकीर्ण / 75–77
9 अभिराजयशोभूषणम् / प्रकीर्ण / 80
10 अभिराजयशोभूषणम् / प्रकीर्ण / 81
11 अभिराजयशोभूषणम् पृ0 287
12 अभिराजयशोभूषणम् पृ0 288

उपर्युक्त गज़ल में 'क्रिमायातम्' पद बार–बार आवृत्त होने के कारण 'काफिया' कहा जाता है।

संस्कृत छन्दशास्त्र की भांति गजल की बहरों का प्रस्तार स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है गज़लकार के प्रयोग वैशिष्ट्य से बहर कहीं दीर्घकाय कहीं लघुकाय दिखाई देती है। आचार्य भरत ने एक अक्षर से अट्ठाइस अक्षर तक बन्ध विस्तार का वर्णन किया है। –

छन्दसां तु भवेदेषां भेदोऽनेकविधः पृथक्।

असंख्यपरिमाणानि वृत्तान्याहुरथो बुधाः।।[14]

आचार्य मिश्र ने चौदह, सत्तरह, उन्नीस, बीस, बाईस, तेईस, चौबीस, अट्ठाईस, एवं बत्तीस मात्राओं वाली संस्कृत गज़लों को भी उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है।

फारसी एवं अरबी भाषा साहित्य में गजल के प्रतिपाद्य उच्छृंखल प्रेम, मदिरा, मदिरालय आदि थे। किन्तु भारतीय भाषा के कवियों ने स्वप्रतिभा वैलक्षण्य से अपनी संस्कृति के अनुरूप संयोजित किया है। प्रतिपाद्य के विषय में वर्णन करते हुए कहते हैं –

क्व चषकाः मदिरोन्मादा उत्पथा मदिरालयाः।

क्व च वासगृहायत्ता समर्चः पुष्पधन्वनः।।

तुरुष्कसंस्कृति क्वासौ समुदाचार लंघिनी।

संस्कृतिश्चास्मदीयेयं क्व पुनश्शीलरक्षिणी।।

अतो हि विश्वरक्षित्री कविभिस्सैव संस्कृति।

गलज्जलिकया वर्ण्या तौरुष्की न कथंचन।।[15]

अर्थात् फारसी गजलों में वर्णित कहां उच्छंखल प्रेम और कहां अखण्ड पुण्यों का सत्फलभूत हमारा उदात्त रागबन्ध। कहां वे शराब के जाम, शराब की उन्मत्तता और अमर्यादित मदिरालय और कहां वासगृह में सम्पादित भगवान पुष्पधन्वा की समर्चना। संस्कृत गज़लकारों ने भारतीय संस्कृति के अनुरूप सत्य, आदर्श प्रेम, सदुपदेश, त्याग, विप्रलम्भ श्रंगार, ईश्वर भक्ति, सामाजिका यथार्थ आदि प्रतिपाद्य ग्रहण कर सर्जना की है।

इस प्रकार आचार्य अभिराज राजेन्द्र मिश्र एवं आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी ने स्वोपज्ञ काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में फारसी काव्य की विधा गज़ल को लक्षणबद्ध कर परिभाषित किया है। संस्कृत साहित्य में वैदेशिक एवं भाषान्तर काव्यविधाओं के समावेश तथा निरन्तर सर्जना से साहित्य श्री की वृद्धि हो रही है तथा सम सामयिक विषयों पर की गईं रचनाएं इसके अजस्र प्रवाह तथा वैश्विक स्वरूप को द्योतित कर रही हैं।

---

13 अभिराजयशोभूषण पृ0 288

14 नाट्यशास्त्र 14/58

15 अभिराजयशोभूषणम् पृ0 291

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. अभिनवभारती, अभिनव गुप्त, बड़ौदा संस्करण 1956ई.।
2. साहित्यदर्पण, विश्वनाथ, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, प्रकाशन वर्ष 2008।
3. अभिराजयशोभूषण, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रकाशन वर्ष 2006।
4. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, राधावल्लभ त्रिपाठी, जगदीश पुस्तक भण्डार जयपुर प्रकाशन वर्ष 2009।
5. अभिज्ञान शाकुन्तलम्, कालिदास, चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन वाराणसी, प्रकाशन वर्ष 2010।
6. नाट्यशास्त्र, आचार्य भरत, चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी, प्रकाशन वर्ष 1980।